समक्ष एस . एस. सोढ़ी, माननीय न्यायमूर्ति

टेक सिंह, *-याचिकाकर्ता।*

बनाम

परमजीत सिंह और अन्य, - *प्रतिवादी।*

1985 की दीवानी पुनरीक्षण संख्या 3450

1 मई 1986.

मध्यस्थता अधिनियम , 1940 - *धारा* 34 - पक्षों *के बीच विवाद साझेदारी के विघटन की ओर ले जाती हैं - साझेदारों का एक समूह द्वारा साझेदारी के व्यवसाय को आगे बढ़ाने से रोकने के लिए दूसरे सेट के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर करना - भागीदारों का दूसरा सेट, सिविल कोर्ट के समक्ष अधिनियम की धारा* 34 के तहत अलग-अलग आवेदन दायर करते हुए *मध्यस्थता समझौते के मद्देनजर मुकदमे पर रोक लगाने की प्रार्थना कर रहा है। पक्षों ने जवाबदावा भी बाद में दायर किया, जिससे मुकदमे में कार्यवाही जारी रखने के संबंध में इसी तरह की आपत्ति भी हुई - जवाबदावा दाखिल करना - क्या मुकदमे में कार्यवाही में एक कदम - धारा* 34 *के तहत आवेदन - क्या खारिज किया जा सकता है।*

अभिनिर्धारित कि मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 34 के तहत कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था और बाद में मुकदमे के जवाब में जवाबदावा भी दायर किया गया था। जवाबदावे में शुरुआत में ही साझेदारी विलेख में मध्यस्थता खंड के कारण मुकदमे में कार्यवाही जारी रखने पर आपत्ति जताई गई थी। अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन पहले ही दायर किये जाने का भी उल्लेख किया गया था। इस प्रकार यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में प्रतिवादी द्वारा मांगी गई राहत में कोई छूट या परित्याग था। जब तक मध्यस्थता समझौते को लागू करने की मांग करने वाले पक्ष द्वारा उठाया गया कथित कदम

ऐसा नहीं है जो मुकदमे को आगे बढ़ाने और दूसरे पक्ष द्वारा अपनाए गए विवाद के समाधान के तरीके को स्वीकार करने का स्पष्ट इरादा प्रदर्शित करता हो, कोई भी अन्य कदम उसे हक से वंचित नहीं करेगा। पक्ष को धारा 34 के तहत राहत मांगने से रोक दिया गया है। इस प्रकार, मामले में केवल जवाबदावा दाखिल करने को किसी भी तरह से सिविल न्यायालय द्वारा निपटाए जा रहे विवाद के प्रति प्रतिवादी की ओर से असंदिग्ध इरादे या सहमति के रूप में नहीं माना जा सकता है। ऐसे में प्रतिवादी स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में मुकदमे पर रोक लगाने का हकदार था और उपरोक्त आवेदन खारिज किए जाने योग्य नहीं है।

(पैरा 5 और 6)

श्री एमके बंसल, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, चंडीगढ़ की अदालत के दिनांक 13 सितंबर, 1985 के आदेश की *समीक्षा के लिए मध्यस्थता अधिनियम की धारा* 34 *के तहत याचिका , जिसमें कुमारी राज जैन, एचसीएस, उप-न्यायाधीश प्रथम श्रेणी के आदेश दिनांक 11 जून,* 19 *की पुष्टि की गई है जिसमें उन्होंने* अंतरिम *निषेधाज्ञा के आवेदन को खारिज कर दिया ।*

याचिकाकर्ता के वकील यूएस साहनी ।

जेएस विर्क, वकील के साथ भूपिंदर सिंह, वकील, *प्रतिवादियों के लिए,*

निर्णय

एसएस सोढ़ी, माननीय न्यायमूर्ति

1. जवाबदावा दाखिल करने से मध्यस्थता अधिनियम, 1940 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 34 के तहत कार्यवाही पर रोक नहीं लगती है। इसका उदाहरण यहाँ है।

2. पार्टियों के बीच साझेदारी विलेख में एक मध्यस्थता खंड शामिल था जो निम्नानुसार है:-

"पार्टियों के बीच मतभेद के किसी भी विवाद के मामले में, इसे एक मध्यस्थ के पास भेजा जा सकता है जिसे भागीदारों की आपसी सहमति से नियुक्त किया जाएगा और उसका निर्णय अंतिम होगा और भागीदारों पर बाध्यकारी होगा।"

3. साझेदारों के बीच मतभेद उत्पन्न हो गए हैं, उनमें से एक समूह, अर्थात्, परमजीत सिंह, अजमेर सिंह और मेहर सिंह ने साझेदारी को भंग कर दिया और फिर अन्य साझेदारों टेक सिंह और हरि सिंह के खिलाफ मुकदमा दायर किया और उन्हें साझेदारी के व्यवसाय को आगे बढ़ाने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की मांग की। मुकदमे के साथ-साथ अस्थायी निषेधाज्ञा का आवेदन भी दाखिल किया गया। मुकदमे की सूचना प्राप्त होने पर, 23 जनवरी, 1985 को प्रतिवादी टेक सिंह ने अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें प्रार्थना की गई कि पार्टियों के बीच मध्यस्थता समझौते के मद्देनजर मुकदमे में कार्यवाही रोक दी जाए। यह भी कहा गया कि विवाद पहले ही मध्यस्थ के पास भेजा जा चुका है और पक्ष उसके सामने पेश हो चुके हैं।

4. अस्थायी निषेधाज्ञा के लिए आवेदन का जवाब दाखिल करने के अलावा प्रतिवादी ने अपना जवाबदावा भी दाखिल किया। अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन के उत्तर के लिए मामले को 6 फरवरी 1985 तक के लिए स्थगित कर दिया गया । यह उत्तर अंततः 7 फरवरी, 1985 को दाखिल किया गया। इस उत्तर में उठाई गई दलीलों में से एक यह थी कि प्रतिवादी द्वारा जवाबदावा दाखिल करना कार्यवाही में एक कदम है और आवेदन केवल इस आधार पर खारिज किए जाने योग्य है। यह आपत्ति ट्रायल कोर्ट और निचली अपीलीय अदालत दोनों में प्रबल रही। प्रतिवादी की मांग के अनुसार कार्यवाही पर रोक लगाने से इनकार कर दिया गया। यही पुनरीक्षण में चुनौती है।

5. यह देखा जाएगा कि अधिनियम की धारा 34 के तहत कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए आवेदन पहले, यानी 23 जनवरी, 1985 को दायर किया गया था, और यह न्यायनिर्णयन की प्रतीक्षा कर रहा था जब प्रतिवादी ने यह जवाबदावा दायर किया था कि आपत्ति वहां ली गई थी साझेदारी विलेख में मध्यस्थता खंड के कारण मुकदमे में कार्यवाही जारी रखने की शुरुआत। अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन पहले ही दायर किये जाने का भी उल्लेख किया गया था । यह ध्यान रखना

उचित है कि प्रतिवादी के वकील जवाबदावा दाखिल करने के अलावा अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में प्रतिवादी द्वारा मांगी गई राहत के किसी भी छूट या परित्याग का अनुमान लगाने के लिए रिकॉर्ड या परिस्थितियों पर कोई सामग्री नहीं बता सके। ऐसी परिस्थितियाँ होने पर, क्या यह कहा जा सकता है कि प्रतिवादी ने केवल जवाबदावा दाखिल करके अधिनियम की धारा 34 के तहत राहत से खुद को अयोग्य घोषित कर दिया है?

6. यहां लागू किया जाने वाला परीक्षण वह है जो **भारतीय खाद्य निगम बनाम यादव इंजीनियर और ठेकेदार, 1982(2) एससीसी 499** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया था , जहां प्रश्न उठाया गया था कि "प्रतिवादी की ओर से जिस पर अदालत में मुकदमा दायर किया गया है और जिसके पास वादी के साथ मौजूदा वैध मध्यस्थता समझौता है, उसकी ओर से क्या कार्रवाई कार्यवाही में ऐसे कदम उठाएगी, जिससे उसे मुकदमे पर रोक लगाने का अधिकार नहीं दिया जाएगा, जो कि यदि दिया जाता है, क्या वह मध्यस्थता समझौते को लागू करने में सक्षम होगा?" ये अभिनिर्धारित हुआ था :-

"..... जब तक कि मध्यस्थता समझौते को लागू करने की मांग करने वाले पक्ष द्वारा उठाया गया कथित कदम ऐसा नहीं है जो मुकदमे के साथ आगे बढ़ने और विधि में सहमति देने का स्पष्ट इरादा प्रदर्शित करता हो दूसरे पक्ष द्वारा अपनाए गए विवाद के समाधान, अर्थात् मुकदमा दायर करना और इस तरह यह संकेत मिलता है कि उसने मध्यस्थता समझौते के तहत विवाद को मध्यस्थता द्वारा हल करने के अपने अधिकार को छोड़ दिया है, कोई भी अन्य कदम पार्टी को धारा 34 के तहत राहत मांगने से वंचित नहीं करेगा। ....."

7. इस प्रकाश में देखा जाए तो, इस मामले में प्रतिवादी द्वारा जवाबदावा दाखिल करने मात्र को किसी भी तरह से पार्टियों के बीच मध्यस्थता समझौते के तहत मध्यस्थों के बजाय सिविल कोर्ट द्वारा निपटाए जा रहे विवादों के प्रति उसकी ओर से किसी स्पष्ट इरादे या सहमति के रूप में नहीं माना जा सकता है। ऐसा होने पर, प्रतिवादी स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में मुकदमे पर रोक लगाने के हकदार थे , जैसा कि उन्होंने प्रार्थना की थी।

8. इस स्थिति का सामना करते हुए वादी के वकील श्री जेएस विर्क ने यह दलील देने की मांग की कि अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन में यह विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया था कि प्रतिवादी मध्यस्थता समझौते का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। यह भी तर्क दिया गया कि चूंकि वादी द्वारा प्रतिवादियों के खिलाफ धोखाधड़ी का आरोप लगाया गया था, इसलिए मामले का निर्णय मध्यस्थता के बजाय सिविल कोर्ट द्वारा किया जाना आवश्यक है। इनमें से कोई भी दलील वादी द्वारा दायर किए गए जवाब में नहीं उठाई गई थी, न ही नीचे दिए गए किसी भी न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई मुद्दा उठाया गया था। इसलिए, उन्हें पुनरीक्षण में पहली बार उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

परिणामस्वरूप, निचली अपीलीय अदालत के आक्षेपित आदेश को रद्द कर दिया जाता है और अधिनियम की धारा 34 के संदर्भ में वादी के मुकदमे पर रोक लगाने का आदेश दिया जाता है। फलस्वरूप यह पुनरीक्षण याचिका लागत सहित स्वीकार की जाती है। वकील की फीस रु. 300/-।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

उदित अग्रवाल

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

करनाल, हरियाणा